IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

वैश्वीकरण के दौर में एकात्म मानववाद और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की प्रासंगिकता : एक समीक्षात्मक अध्ययन

प्रो.(डॉ.) गोविन्द प्रसाद मिश्र
शोध-निदेशक

अमृता कुमारी
शोधार्थिनी

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक (म.प्र.)

भाग–1

सार (Abstract)

वर्तमान वैश्वीकरण के युग में विश्व आर्थिक, राजनीतिक, तकनीकी और सांस्कृतिक स्तर पर अभूतपूर्व परिवर्तन से गुजर रहा है। एक ओर वैश्वीकरण ने ज्ञान, संचार, व्यापार तथा तकनीकी विकास को गति प्रदान की है, वहीं दूसरी ओर सांस्कृतिक समरूपीकरण, उपभोक्तावाद, पहचान के संकट तथा नैतिक मूल्यों के ह्रास जैसी चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। इन परिस्थितियों में भारतीय दार्शनिक परंपरा के दो महत्वपूर्ण विमर्श—सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और पंडित दीनदयाल उपाध्याय द्वारा प्रतिपादित एकात्म मानववाद—विशेष रूप से प्रासंगिक प्रतीत होते हैं।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद राष्ट्र को केवल राजनीतिक इकाई न मानकर उसकी सांस्कृतिक चेतना, ऐतिहासिक निरंतरता और सभ्यतागत मूल्यों के आधार पर समझने का प्रयास करता है। इसके विपरीत नहीं, बल्कि उसके पूरक रूप में एकात्म मानववाद मनुष्य, समाज, प्रकृति और राष्ट्र के बीच संतुलित एवं समन्वित संबंधों पर आधारित विकास-दर्शन प्रस्तुत करता है। यह दर्शन आर्थिक विकास को नैतिकता, सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक मूल्यों तथा पर्यावरणीय संतुलन से पृथक नहीं मानता।

यह शोध-पत्र वैश्वीकरण के समकालीन संदर्भ में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद की दार्शनिक प्रासंगिकता का आलोचनात्मक अध्ययन करता है। अध्ययन का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि भारतीय चिंतन वैश्विक चुनौतियों—जैसे सांस्कृतिक अस्मिता का संकट, उपभोक्तावाद, सामाजिक विखंडन, पर्यावरणीय असंतुलन तथा विकास की असमानताओं—के समाधान हेतु किस प्रकार वैकल्पिक दृष्टि प्रदान कर सकता है। शोध में दार्शनिक-विश्लेषणात्मक तथा तुलनात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है। अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि एकात्म मानववाद और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद परस्पर पूरक अवधारणाएँ हैं, जो वैश्वीकरण के युग में मानव-केंद्रित, सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील तथा नैतिक विकास मॉडल के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं।

मुख्य शब्द (Keywords): वैश्वीकरण, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, एकात्म मानववाद, पंडित दीनदयाल उपाध्याय, भारतीय दर्शन, सांस्कृतिक अस्मिता, समग्र विकास।

1. प्रस्तावना

इक्कीसवीं शताब्दी को वैश्वीकरण की शताब्दी कहा जाता है। सूचना-प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मुक्त व्यापार, पूँजी के वैश्विक प्रवाह और संचार क्रांति ने विश्व को अभूतपूर्व रूप से जोड़ दिया है। आज किसी भी राष्ट्र की आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाएँ पृथक नहीं रह गई हैं, बल्कि वे वैश्विक संरचनाओं से गहराई से प्रभावित होती हैं। यद्यपि वैश्वीकरण ने विकास के अनेक अवसर प्रदान किए हैं, परंतु इसके साथ-साथ सांस्कृतिक पहचान, स्थानीय परंपराओं, सामाजिक एकता और नैतिक मूल्यों के समक्ष गंभीर चुनौतियाँ भी उत्पन्न हुई हैं।

भारतीय दार्शनिक परंपरा में राष्ट्र को केवल राजनीतिक सीमाओं से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना, साझा इतिहास, जीवन-मूल्यों और सभ्यतागत निरंतरता के आधार पर समझा गया है। इसी कारण सांस्कृतिक

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

राष्ट्रवाद भारतीय चिंतन में राष्ट्र की आत्मा के रूप में संस्कृति को स्वीकार करता है। दूसरी ओर, पंडित दीनदयाल उपाध्याय द्वारा प्रतिपादित एकात्म मानववाद व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और प्रकृति के बीच समन्वित संबंध स्थापित करने वाला जीवन-दर्शन प्रस्तुत करता है। यह दर्शन पश्चिमी पूँजीवाद और समाजवाद दोनों की सीमाओं की आलोचना करते हुए मानव-केंद्रित, नैतिक तथा संतुलित विकास की अवधारणा प्रस्तुत करता है।

आज जब वैश्वीकरण के कारण उपभोक्तावाद, सांस्कृतिक समरूपीकरण, पर्यावरणीय संकट और सामाजिक विखंडन जैसी समस्याएँ बढ़ रही हैं, तब यह प्रश्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि क्या भारतीय दार्शनिक परंपरा इन चुनौतियों का कोई वैकल्पिक समाधान प्रस्तुत कर सकती है। इसी प्रश्न के उत्तर की खोज इस शोध-पत्र का मूल उद्देश्य है।

इस अध्ययन में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद का केवल वर्णन नहीं किया जाएगा, बल्कि उनका आलोचनात्मक परीक्षण करते हुए यह विश्लेषण किया जाएगा कि समकालीन वैश्विक व्यवस्था में उनकी उपयोगिता, सीमाएँ तथा संभावनाएँ क्या हैं। इस प्रकार यह शोध भारतीय दर्शन और समकालीन वैश्विक विमर्श के मध्य एक सार्थक संवाद स्थापित करने का प्रयास करता है।

भाग–2 वैश्वीकरण की अवधारणा: दार्शनिक आधार, ऐतिहासिक विकास एवं समकालीन विमर्श

2.1 वैश्वीकरण: अर्थ एवं अवधारणा

वैश्वीकरण (Globalization) समकालीन विश्व की एक बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, तकनीकी तथा वैचारिक स्तर पर विभिन्न राष्ट्र एक-दूसरे के साथ अधिकाधिक जुड़ते जाते हैं। यह केवल बाजारों के विस्तार की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि ज्ञान, संस्कृति, संचार, पूँजी, श्रम, विज्ञान और जीवन-मूल्यों के वैश्विक आदान-प्रदान का भी माध्यम है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से विशेषतः 1990 के दशक के बाद वैश्वीकरण ने विश्व व्यवस्था को गहराई से प्रभावित किया है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

Anthony Giddens के अनुसार, वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा विश्व के विभिन्न समाज इस प्रकार परस्पर जुड़े हैं कि स्थानीय घटनाएँ भी दूरस्थ वैश्विक घटनाओं से प्रभावित होने लगती हैं। वहीं Roland Robertson वैश्वीकरण को विश्व के "संकुचन" तथा "वैश्विक चेतना" के विकास की प्रक्रिया मानते हैं।

भारतीय दृष्टि से वैश्वीकरण कोई पूर्णतः नवीन अवधारणा नहीं है। भारतीय परंपरा में "वसुधैव कुटुम्बकम्", "सर्वे भवन्तु सुखिनः" तथा "एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति" जैसे सिद्धांत सम्पूर्ण मानवता के प्रति समन्वित दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। अतः भारतीय वैश्विक दृष्टि सांस्कृतिक समरसता एवं नैतिक सह-अस्तित्व पर आधारित है, जबकि आधुनिक आर्थिक वैश्वीकरण मुख्यतः बाजार-केंद्रित स्वरूप ग्रहण करता है।

2.2 वैश्वीकरण का ऐतिहासिक विकास

वैश्वीकरण का इतिहास प्राचीन व्यापारिक मार्गों से प्रारम्भ होकर आधुनिक डिजिटल युग तक विस्तृत है। इसे सामान्यतः निम्न चरणों में समझा जा सकता है—

(क) प्राचीन चरण:

रेशम मार्ग, समुद्री व्यापार, भारतीय महासागर के व्यापारिक नेटवर्क तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान के माध्यम से सभ्यताओं के बीच संपर्क स्थापित हुआ। भारत, चीन, रोम तथा मध्य एशिया के मध्य आर्थिक एवं सांस्कृतिक संबंध वैश्वीकरण के प्रारम्भिक रूप थे।

(ख) औपनिवेशिक चरण:

पन्द्रहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य यूरोपीय उपनिवेशवाद ने वैश्विक व्यापार को तीव्र गति प्रदान की। यद्यपि इस प्रक्रिया से विश्व का आर्थिक एकीकरण बढ़ा, किन्तु इसके साथ सांस्कृतिक वर्चस्व, आर्थिक शोषण तथा राजनीतिक प्रभुत्व भी जुड़ा रहा।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

(ग) उत्तर-औद्योगिक चरण:

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं—जैसे IMF, World Bank तथा GATT (बाद में WTO) की स्थापना ने वैश्विक आर्थिक संरचना को संस्थागत रूप प्रदान किया।

(घ) समकालीन चरण:

1991 के बाद उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण (LPG Reforms) ने भारत सहित अनेक देशों की अर्थव्यवस्था को विश्व बाजार से जोड़ दिया। इंटरनेट, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल प्लेटफॉर्म तथा वैश्विक वित्तीय तंत्र ने वैश्वीकरण को अभूतपूर्व गति प्रदान की।

2.3 वैश्वीकरण के दार्शनिक आधार

वैश्वीकरण केवल आर्थिक अवधारणा नहीं, बल्कि इसके पीछे अनेक दार्शनिक आधार भी निहित हैं—

(i) उदारवाद (Liberalism)

उदारवाद व्यक्तिगत स्वतंत्रता, मुक्त व्यापार तथा न्यूनतम राज्य-हस्तक्षेप का समर्थन करता है। आधुनिक वैश्वीकरण की वैचारिक नींव इसी दर्शन पर आधारित मानी जाती है।

(ii) पूँजीवाद (Capitalism)

पूँजीवादी व्यवस्था वैश्विक निवेश, उत्पादन एवं बाजार विस्तार को प्रोत्साहित करती है। परिणामस्वरूप बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्रभाव निरंतर बढ़ा है।

(iii) उत्तर-आधुनिकता (Postmodernism)

उत्तर-आधुनिक विचारक वैश्विक संचार, सांस्कृतिक विविधता एवं पहचान के नए विमर्श को वैश्वीकरण की विशेषता मानते हैं, परंतु वे सांस्कृतिक वर्चस्व एवं उपभोक्तावाद की आलोचना भी करते हैं।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

(iv) भारतीय दार्शनिक दृष्टि

भारतीय दर्शन में वैश्विकता का आधार आध्यात्मिक एकता है। उपनिषदों का "अयं निजः परो वेति..." तथा महा उपनिषद का "वसुधैव कुटुम्बकम्" सम्पूर्ण मानवता को एक परिवार मानने की अवधारणा प्रस्तुत करता है। यही दृष्टि आधुनिक वैश्वीकरण के मानवीय विकल्प का आधार बन सकती है।

2.4 वैश्वीकरण के प्रमुख आयाम

वैश्वीकरण बहुआयामी प्रक्रिया है—

आर्थिक आयाम: मुक्त व्यापार, विदेशी निवेश, वैश्विक उत्पादन श्रृंखला।

राजनीतिक आयाम: अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं का बढ़ता प्रभाव एवं वैश्विक शासन की अवधारणा।

सांस्कृतिक आयाम: जीवन-शैली, भाषा, मनोरंजन तथा उपभोक्ता संस्कृति का वैश्विक प्रसार।

तकनीकी आयाम: इंटरनेट, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल अर्थव्यवस्था एवं सूचना क्रांति।

पर्यावरणीय आयाम: जलवायु परिवर्तन, जैव-विविधता संरक्षण तथा वैश्विक पर्यावरणीय सहयोग।

2.5 वैश्वीकरण: अवसर एवं चुनौतियाँ

अवसर

- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का तीव्र विकास।
- वैश्विक व्यापार एवं निवेश में वृद्धि।
- ज्ञान एवं शिक्षा का अंतरराष्ट्रीय विस्तार।
- स्वास्थ्य एवं चिकित्सा अनुसंधान में सहयोग।
- डिजिटल संचार के माध्यम से विश्वव्यापी संपर्क।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

चुनौतियाँ

- सांस्कृतिक समरूपीकरण।
- उपभोक्तावाद एवं भौतिकवाद का विस्तार।
- स्थानीय भाषाओं एवं परंपराओं का क्षरण।
- आर्थिक असमानता में वृद्धि।
- पर्यावरणीय संकट।
- राष्ट्रीय पहचान एवं सांस्कृतिक अस्मिता पर प्रभाव।

2.6 वैश्वीकरण और भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि

भारतीय परंपरा वैश्विकता का विरोध नहीं करती, बल्कि उसे नैतिकता, धर्म, सह-अस्तित्व तथा मानवीय कल्याण से जोड़ती है। भारतीय चिंतन के अनुसार विकास तभी सार्थक है जब वह व्यक्ति, समाज, प्रकृति तथा राष्ट्र के मध्य संतुलन स्थापित करे। यही कारण है कि भारतीय दार्शनिक परंपरा वैश्वीकरण को केवल आर्थिक घटना नहीं, बल्कि नैतिक एवं सांस्कृतिक उत्तरदायित्व के रूप में भी देखती है।

इसी संदर्भ में पंडित दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानववाद विशेष महत्त्व प्राप्त करता है, क्योंकि वह विकास को मनुष्य की समग्र उन्नति—शरीर, मन, बुद्धि एवं आत्मा—से जोड़ता है। अतः वैश्वीकरण के युग में यदि विकास को मानवीय और सांस्कृतिक आधार प्रदान करना है, तो भारतीय दर्शन के इन सिद्धांतों का पुनर्पाठ आवश्यक हो जाता है।

भाग–2 का निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि वैश्वीकरण एक जटिल एवं बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसने विश्व को अभूतपूर्व रूप से जोड़ने के साथ-साथ सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक न्याय और नैतिक मूल्यों के समक्ष नई चुनौतियाँ

भी उत्पन्न की हैं। भारतीय दार्शनिक परंपरा, विशेषकर सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद, इन चुनौतियों के समाधान हेतु एक वैकल्पिक एवं संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। अतः अगले भाग में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की ऐतिहासिक एवं दार्शनिक पृष्ठभूमि का आलोचनात्मक विश्लेषण किया जाएगा।

संदर्भ

1. Giddens, A. (2002). *Runaway World: How Globalisation is Reshaping Our Lives*. Profile Books.
2. Robertson, R. (1992). *Globalization: Social Theory and Global Culture*. Sage.
3. Bhagwati, J. (2004). *In Defense of Globalization*. Oxford University Press.
4. Upadhyaya, D. (1965). *Integral Humanism*. Suruchi Prakashan.
5. Sen, A. (1999). *Development as Freedom*. Oxford University Press.
6. Maha Upanishad. (VI.71–73).
7. Rigveda. (1.164.46).

भाग–3 सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एवं एकात्म मानववाद : दार्शनिक आधार, ऐतिहासिक विकास तथा तुलनात्मक विश्लेषण

3.1 सांस्कृतिक राष्ट्रवाद: अवधारणा एवं स्वरूप

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद (Cultural Nationalism) आधुनिक भारतीय राजनीतिक एवं दार्शनिक चिंतन की एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा है। इसका मूल आधार यह है कि राष्ट्र केवल राजनीतिक सीमाओं, राज्य-सत्ता अथवा आर्थिक संरचना से निर्मित नहीं होता, बल्कि उसकी वास्तविक पहचान उसकी संस्कृति, इतिहास, परम्परा, भाषा, धर्म, जीवन-मूल्यों तथा सामूहिक चेतना में निहित होती है। इस दृष्टि से राष्ट्र एक जीवंत सांस्कृतिक सत्ता है, न कि केवल प्रशासनिक इकाई।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

भारतीय परम्परा में राष्ट्र की अवधारणा का विकास राज्य की अपेक्षा संस्कृति के आधार पर हुआ है। वैदिक साहित्य, उपनिषद, महाभारत तथा पुराणों में राष्ट्र का उल्लेख सांस्कृतिक एकात्मता के रूप में मिलता है। भारतीय समाज अनेक भाषाओं, सम्प्रदायों एवं परम्पराओं से युक्त होने के बावजूद सांस्कृतिक रूप से एक अखण्ड सभ्यता का प्रतिनिधित्व करता है।

Sri Aurobindo ने राष्ट्र को ईश्वरीय शक्ति का जीवंत स्वरूप माना, जबकि स्वामी विवेकानन्द ने भारतीय संस्कृति को मानवता के आध्यात्मिक नेतृत्व का आधार बताया। उनके अनुसार भारत की शक्ति उसकी संस्कृति, अध्यात्म तथा सार्वभौमिक दृष्टि में निहित है।

3.2 भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का दार्शनिक आधार

भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का आधार निम्नलिखित दार्शनिक सिद्धांतों पर टिका हुआ है—

(क) वसुधैव कुटुम्बकम्

महा उपनिषद् का यह सिद्धान्त सम्पूर्ण मानवता को एक परिवार के रूप में स्वीकार करता है। इससे स्पष्ट होता है कि भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद संकीर्ण राष्ट्रवाद नहीं, बल्कि विश्व-बन्धुत्व का समर्थक है।

(ख) धर्म की अवधारणा

भारतीय दर्शन में धर्म का अर्थ किसी विशेष सम्प्रदाय नहीं, बल्कि वह नैतिक व्यवस्था है जो समाज, व्यक्ति तथा प्रकृति के मध्य संतुलन स्थापित करती है।

(ग) सांस्कृतिक निरन्तरता

भारत में हजारों वर्षों से चली आ रही सांस्कृतिक परम्परा ने विविधताओं को समाहित करते हुए राष्ट्रीय एकता को बनाए रखा है। यही सांस्कृतिक निरन्तरता भारतीय राष्ट्रवाद की आधारशिला है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

3.3 सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का आधुनिक विकास

आधुनिक भारत में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का विकास औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध राष्ट्रीय चेतना के साथ हुआ।

बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय के "वन्दे मातरम्" ने राष्ट्र को मातृभूमि के सांस्कृतिक स्वरूप में प्रतिष्ठित किया।

बाल गंगाधर तिलक ने सार्वजनिक गणेशोत्सव एवं शिवाजी महोत्सव के माध्यम से सांस्कृतिक चेतना को राष्ट्रीय आन्दोलन से जोड़ा।

महात्मा गांधी ने स्वदेशी, ग्राम-स्वराज तथा भारतीय जीवन-मूल्यों के माध्यम से सांस्कृतिक आत्मनिर्भरता का समर्थन किया।

स्वतंत्रता के पश्चात् पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को एकात्म मानववाद के माध्यम से दार्शनिक आधार प्रदान किया।

3.4 एकात्म मानववाद : अवधारणा

एकात्म मानववाद (Integral Humanism) पंडित दीनदयाल उपाध्याय द्वारा 1965 में प्रतिपादित भारतीय विकास-दर्शन है। यह दर्शन पश्चिमी पूँजीवाद तथा समाजवाद दोनों की सीमाओं की आलोचना करते हुए भारतीय संस्कृति पर आधारित समग्र मानव-दृष्टि प्रस्तुत करता है।

उपाध्याय के अनुसार—

"मनुष्य केवल आर्थिक प्राणी नहीं है, बल्कि वह शरीर, मन, बुद्धि एवं आत्मा का समन्वित स्वरूप है।"

इस प्रकार विकास का उद्देश्य केवल उत्पादन अथवा उपभोग नहीं, बल्कि मानव के सर्वांगीण विकास की स्थापना है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

3.5 एकात्म मानववाद के मूल सिद्धान्त

(1) समग्र मानव दृष्टि

मनुष्य चार आयामों—शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा—का समन्वित स्वरूप है। अतः विकास भी इन सभी आयामों का होना चाहिए।

(2) व्यक्ति और समाज का समन्वय

पश्चिमी उदारवाद व्यक्ति को सर्वोच्च मानता है तथा समाजवाद राज्य को। एकात्म मानववाद दोनों के मध्य संतुलन स्थापित करता है।

(3) राष्ट्र एक जीवंत सांस्कृतिक इकाई

राष्ट्र केवल राजनीतिक व्यवस्था नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना का सजीव स्वरूप है।

(4) अन्त्योदय

समाज के अंतिम व्यक्ति तक विकास का लाभ पहुँचना चाहिए। यही वास्तविक सामाजिक न्याय है।

(5) स्वदेशी एवं आत्मनिर्भरता

आर्थिक विकास स्थानीय संसाधनों, ग्राम-आधारित अर्थव्यवस्था तथा आत्मनिर्भर उत्पादन पर आधारित होना चाहिए।

(6) प्रकृति के साथ संतुलन

मनुष्य और प्रकृति परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि सहयोगी हैं। पर्यावरण संरक्षण विकास का अभिन्न अंग है।

3.6 वैश्वीकरण और एकात्म मानववाद

आधुनिक वैश्वीकरण मुख्यतः बाजार, उपभोक्तावाद तथा पूँजी संचय पर आधारित है। इसके विपरीत एकात्म मानववाद विकास को नैतिकता, सामाजिक उत्तरदायित्व तथा सांस्कृतिक मूल्यों से जोड़ता है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

वैश्वीकरण	एकात्म मानववाद
बाजार-केंद्रित	मानव-केंद्रित
उपभोग	संतुलित जीवन
प्रतियोगिता	सहयोग
पूँजी	मानव गरिमा
आर्थिक विकास	समग्र विकास
वैश्विक बाजार	वैश्विक परिवार

इस तुलना से स्पष्ट होता है कि एकात्म मानववाद वैश्वीकरण का विरोध नहीं करता, बल्कि उसे मानवीय दिशा प्रदान करने का प्रयास करता है।

3.7 सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एवं एकात्म मानववाद का अंतर्संबंध

दोनों अवधारणाएँ भारतीय संस्कृति को राष्ट्र-निर्माण का आधार मानती हैं।

समानताएँ

- संस्कृति को राष्ट्र की आत्मा मानना।
- नैतिक विकास पर बल।
- सामाजिक समरसता का समर्थन।
- भारतीय परम्परा का सम्मान।
- अन्त्योदय एवं लोक कल्याण।
- प्रकृति के साथ संतुलन।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

भिन्नताएँ

- सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का मुख्य केन्द्र राष्ट्रीय सांस्कृतिक पहचान है।
- एकात्म मानववाद का केन्द्र समग्र मानव विकास है।
- सांस्कृतिक राष्ट्रवाद राष्ट्र की सांस्कृतिक एकता पर बल देता है।
- एकात्म मानववाद व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं विश्व के समन्वय पर बल देता है।

दोनों मिलकर भारतीय विकास-दर्शन की पूरक अवधारणाएँ प्रस्तुत करते हैं।

3.8 समकालीन प्रासंगिकता

वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में निम्न समस्याएँ उभर रही हैं—

- सांस्कृतिक पहचान का संकट।
- उपभोक्तावाद।
- पर्यावरणीय असंतुलन।
- सामाजिक असमानता।
- मानसिक तनाव एवं नैतिक पतन।

इन समस्याओं के समाधान हेतु सांस्कृतिक राष्ट्रवाद सांस्कृतिक आत्मविश्वास प्रदान करता है, जबकि एकात्म मानववाद संतुलित एवं मानव-केंद्रित विकास का मार्ग सुझाता है।

3.9 आलोचनात्मक मूल्यांकन

यद्यपि सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद भारतीय चिंतन की महत्त्वपूर्ण अवधारणाएँ हैं, तथापि इनके संबंध में विभिन्न विद्वानों द्वारा अनेक प्रश्न भी उठाए गए हैं। कुछ आलोचकों का मत है कि सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की व्याख्या करते समय यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि भारत की बहुलतावादी परम्परा,

धार्मिक विविधता तथा संवैधानिक मूल्यों का पर्याप्त सम्मान बना रहे। दूसरी ओर, एकात्म मानववाद के समक्ष यह चुनौती है कि उसके दार्शनिक सिद्धान्तों को समकालीन आर्थिक नीतियों एवं वैश्विक संस्थागत संरचनाओं में किस प्रकार व्यावहारिक रूप दिया जाए।

फिर भी, पर्यावरण संकट, सामाजिक विषमता, उपभोक्तावाद तथा मानवीय मूल्यों के ह्रास के वर्तमान संदर्भ में एकात्म मानववाद का समग्र विकास-दर्शन तथा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का सभ्यतागत दृष्टिकोण वैश्विक विमर्श को एक वैकल्पिक दिशा प्रदान करने की क्षमता रखते हैं।

भाग–3 का निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एवं एकात्म मानववाद परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि पूरक दार्शनिक अवधारणाएँ हैं। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद भारतीय सभ्यता की सांस्कृतिक आत्मा को अभिव्यक्त करता है, जबकि एकात्म मानववाद उसी आत्मा को व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं विश्व के समग्र विकास से जोड़ता है। वैश्वीकरण के वर्तमान युग में, जहाँ आर्थिक प्रगति के साथ सांस्कृतिक संकट और नैतिक चुनौतियाँ भी उभर रही हैं, ये दोनों विचारधाराएँ एक संतुलित, मानवोन्मुख एवं नैतिक वैश्विक व्यवस्था के निर्माण हेतु महत्त्वपूर्ण वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती हैं।

संदर्भ

- Upadhyaya, D. (1965). *Integral Humanism*. Suruchi Prakashan.
- Aurobindo. (1918). *The Ideal of Human Unity*. Pondicherry.
- Vivekananda, S. (1999). *The Complete Works of Swami Vivekananda*. Advaita Ashrama.
- Gandhi, M. K. (1909/2009). *Hind Swaraj*. Navajivan Publishing House.
- Radhakrishnan, S. (1923). *Indian Philosophy* (Vol. I). Oxford University Press.
- Sen, A. (1999). *Development as Freedom*. Oxford University Press.

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

भाग–4 वैश्वीकरण के दौर में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एवं एकात्म मानववाद की समकालीन प्रासंगिकता : एक आलोचनात्मक दार्शनिक समीक्षा

4.1 प्रस्तावना

इक्कीसवीं शताब्दी में वैश्वीकरण केवल आर्थिक परिवर्तन का पर्याय नहीं रह गया है, बल्कि यह संस्कृति, राजनीति, शिक्षा, पर्यावरण, तकनीकी विकास तथा मानवीय मूल्यों को भी व्यापक रूप से प्रभावित कर रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence), डिजिटल अर्थव्यवस्था, वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला तथा बहुराष्ट्रीय कंपनियों के विस्तार ने विश्व को परस्पर जोड़ दिया है। किन्तु इस प्रक्रिया ने सांस्कृतिक अस्मिता, सामाजिक न्याय, पर्यावरणीय संतुलन तथा नैतिक मूल्यों के समक्ष अनेक नई चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं।

ऐसे समय में भारतीय दार्शनिक परम्परा के दो महत्त्वपूर्ण वैचारिक प्रतिमान—सांस्कृतिक राष्ट्रवाद तथा पंडित दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानववाद—एक वैकल्पिक विकास-दृष्टि प्रस्तुत करते हैं। इनकी प्रासंगिकता का मूल्यांकन केवल राजनीतिक संदर्भ में नहीं, बल्कि समकालीन वैश्विक दार्शनिक विमर्श के संदर्भ में किया जाना चाहिए।

4.2 वैश्वीकरण और सांस्कृतिक पहचान का संकट

वैश्वीकरण की सबसे बड़ी चुनौती सांस्कृतिक समरूपीकरण (Cultural Homogenization) है। वैश्विक मीडिया, मनोरंजन उद्योग, उपभोक्ता संस्कृति और डिजिटल मंचों ने अनेक स्थानीय भाषाओं, परम्पराओं तथा सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों पर दबाव उत्पन्न किया है। परिणामस्वरूप सांस्कृतिक विविधता का स्थान एकरूप उपभोक्ता संस्कृति ग्रहण करती दिखाई देती है।

भारतीय संदर्भ में यह चुनौती और अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि भारत की पहचान उसकी बहुलतावादी सांस्कृतिक परम्परा में निहित है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद इस संकट का उत्तर सांस्कृतिक

आत्मबोध, सभ्यतागत निरन्तरता और सांस्कृतिक स्वाभिमान के माध्यम से प्रस्तुत करता है। यह किसी अन्य संस्कृति का विरोध नहीं करता, बल्कि अपनी सांस्कृतिक जड़ों के संरक्षण के साथ वैश्विक संवाद का समर्थन करता है।

4.3 वैश्वीकरण एवं उपभोक्तावाद

समकालीन वैश्वीकरण का प्रमुख आधार उपभोक्तावादी अर्थव्यवस्था है। व्यक्ति की सफलता का मूल्यांकन उसके उपभोग, आय तथा बाजार-क्षमता से किया जाने लगा है। इससे जीवन का नैतिक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक आयाम अपेक्षाकृत कमजोर पड़ता है।

एकात्म मानववाद इस प्रवृत्ति की आलोचना करते हुए स्पष्ट करता है कि मनुष्य केवल आर्थिक इकाई नहीं है। उसका विकास शरीर, मन, बुद्धि तथा आत्मा—चारों स्तरों पर होना चाहिए। इस प्रकार यह दर्शन आर्थिक विकास और नैतिक उत्तरदायित्व के मध्य संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता है।

4.4 पर्यावरणीय संकट और एकात्म मानववाद

जलवायु परिवर्तन, जैव-विविधता का क्षरण, प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन तथा प्रदूषण आज वैश्विक स्तर की समस्याएँ हैं। आधुनिक विकास मॉडल प्रकृति को संसाधन मात्र मानता है, जबकि भारतीय दर्शन प्रकृति को जीवन-सहचर मानता है।

एकात्म मानववाद में मनुष्य और प्रकृति के संबंध को परस्पर पूरक माना गया है। यह दृष्टिकोण आज के "सतत विकास" (Sustainable Development) तथा "पर्यावरणीय नैतिकता" (Environmental Ethics) से गहरे स्तर पर जुड़ता है। इसीलिए यह दर्शन वर्तमान पर्यावरणीय संकट के समाधान हेतु महत्त्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रदान करता है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

4.5 वैश्वीकरण और सामाजिक न्याय

वैश्वीकरण ने आर्थिक विकास की गति तो बढ़ाई है, किन्तु आर्थिक असमानता भी बढ़ी है। विश्व के अनेक देशों में आय, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा संसाधनों तक पहुँच में गहरी विषमता विद्यमान है।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय का "अन्त्योदय" सिद्धान्त समाज के अंतिम व्यक्ति के कल्याण को विकास का मापदण्ड मानता है। यह विचार समकालीन समावेशी विकास (Inclusive Development) की अवधारणा के निकट है। इस दृष्टि से एकात्म मानववाद केवल आर्थिक नीति नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय का नैतिक दर्शन भी है।

4.6 डिजिटल वैश्वीकरण और मानवीय गरिमा

डिजिटल तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा सोशल मीडिया ने मानव जीवन में अभूतपूर्व परिवर्तन किए हैं। किन्तु इनके साथ निजता (Privacy), डेटा-सुरक्षा, एल्गोरिद्मिक पक्षपात (Algorithmic Bias) तथा डिजिटल असमानता जैसी समस्याएँ भी उभर रही हैं।

एकात्म मानववाद के अनुसार तकनीक का उद्देश्य मनुष्य की गरिमा, स्वतंत्रता और नैतिक विकास होना चाहिए, न कि केवल दक्षता या लाभ। इसलिए यह दर्शन तकनीकी प्रगति के साथ मानवीय उत्तरदायित्व और नैतिक नियंत्रण की आवश्यकता पर बल देता है।

4.7 भारतीय ज्ञान परम्परा और वैश्विक नैतिकता

भारतीय दर्शन में "लोकसंग्रह", "धर्म", "अहिंसा", "समत्व" और "वसुधैव कुटुम्बकम्" जैसी अवधारणाएँ वैश्विक नैतिकता का आधार प्रस्तुत करती हैं। ये सिद्धान्त केवल भारतीय समाज तक सीमित नहीं हैं, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए प्रासंगिक हैं।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, July 2026
Impact Factor: 8.2

आज जब विश्व युद्ध, जलवायु संकट, महामारी, प्रवासन तथा आर्थिक असमानताओं जैसी समस्याओं का सामना कर रहा है, तब भारतीय ज्ञान-परम्परा मानव-केंद्रित एवं नैतिक वैश्वीकरण की दिशा सुझाती है।

4.8 आलोचनात्मक समीक्षा

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद के संबंध में विद्वानों के बीच व्यापक बहस रही है। आलोचनात्मक दृष्टि से निम्न बिन्दु महत्त्वपूर्ण हैं—

1. सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की व्याख्या करते समय भारत की बहुलतावादी, संवैधानिक एवं लोकतांत्रिक परम्परा को केन्द्र में रखना आवश्यक है।
2. एकात्म मानववाद के अनेक सिद्धान्त नैतिक दृष्टि से प्रभावशाली हैं, किन्तु समकालीन वैश्विक आर्थिक व्यवस्था में उनके व्यावहारिक क्रियान्वयन पर और अधिक शोध अपेक्षित है।
3. इन दोनों अवधारणाओं का अध्ययन वैचारिक आग्रह के स्थान पर दार्शनिक, तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक पद्धति से किया जाना चाहिए।
4. भारतीय दर्शन की सार्वभौमिक मान्यताओं और आधुनिक लोकतांत्रिक मूल्यों के मध्य समन्वय स्थापित करना समकालीन शोध का महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है।

4.9 शोधकर्ता का मौलिक दार्शनिक प्रतिपादन (Original Philosophical Argument)

इस शोध का प्रमुख प्रतिपादन यह है कि वैश्वीकरण का संकट केवल आर्थिक संकट नहीं है, बल्कि वह मूलतः **मानवीय, सांस्कृतिक एवं नैतिक संकट** है। इसलिए उसका समाधान भी केवल आर्थिक नीतियों से संभव नहीं है।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद राष्ट्र को सांस्कृतिक आत्मचेतना प्रदान करता है, जबकि एकात्म मानववाद उस आत्मचेतना को व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व के समग्र कल्याण से जोड़ता है। यदि इन दोनों अवधारणाओं

को लोकतांत्रिक बहुलता, संवैधानिक मूल्यों तथा समकालीन वैश्विक नैतिकता के साथ पुनर्परिभाषित किया जाए, तो वे इक्कीसवीं शताब्दी के लिए एक **मानव-केंद्रित विकास प्रतिमान (Human-Centric Development Paradigm)** प्रस्तुत कर सकती हैं।

इसी आधार पर यह शोध यह प्रतिपादित करता है कि वैश्वीकरण का भारतीय विकल्प "अलगाव" नहीं, बल्कि **सांस्कृतिक आत्मविश्वास, नैतिक विकास, सामाजिक समरसता, पर्यावरणीय संतुलन और मानव गरिमा पर आधारित वैश्विक सहभागिता** है। यही इस शोध-पत्र की मौलिक दार्शनिक स्थापना है।

4.10 निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद वैश्वीकरण के विरोधी नहीं हैं, बल्कि उसके मानवीय एवं नैतिक पुनर्संयोजन के पक्षधर हैं। ये दोनों अवधारणाएँ यह प्रतिपादित करती हैं कि आर्थिक प्रगति तभी सार्थक है जब वह सांस्कृतिक अस्मिता, सामाजिक न्याय, पर्यावरणीय संतुलन तथा मानवीय गरिमा की रक्षा करे।

इक्कीसवीं शताब्दी की चुनौतियों—जलवायु परिवर्तन, सांस्कृतिक संकट, डिजिटल असमानता, नैतिक अवमूल्यन तथा सामाजिक विषमता—के संदर्भ में भारतीय दर्शन का यह योगदान वैश्विक विमर्श को एक वैकल्पिक और संतुलित दिशा प्रदान कर सकता है।

संदर्भ

- Beck, U. (2000). *What Is Globalization?* Polity Press.
- Giddens, A. (2002). *Runaway World*. Profile Books.
- Sen, A. (1999). *Development as Freedom*. Oxford University Press.
- Upadhyaya, D. (1965). *Integral Humanism*. Suruchi Prakashan.
- Vivekananda, S. (1999). *The Complete Works of Swami Vivekananda*. Advaita Ashrama.

- Radhakrishnan, S. (1923). *Indian Philosophy* (Vol. I). Oxford University Press.
- Gandhi, M. K. (1909/2009). *Hind Swaraj*. Navajivan Publishing House.

भाग–5 निष्कर्ष, शोध-निष्कर्ष, मौलिक योगदान एवं संदर्भ सूची

5.1 समग्र निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध-पत्र **"वैश्वीकरण के दौर में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद की प्रासंगिकता : एक दार्शनिक एवं समालोचनात्मक अध्ययन"** का मुख्य उद्देश्य यह स्पष्ट करना था कि वर्तमान वैश्विक व्यवस्था में भारतीय दार्शनिक चिंतन किस प्रकार एक वैकल्पिक एवं मानव-केंद्रित विकास-दृष्टि प्रस्तुत कर सकता है। अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि वैश्वीकरण ने विश्व को आर्थिक, तकनीकी और संचार के स्तर पर अभूतपूर्व रूप से जोड़ने का कार्य किया है, किन्तु इसके साथ सांस्कृतिक समरूपीकरण, उपभोक्तावाद, पर्यावरणीय संकट, सामाजिक विषमता तथा नैतिक अवमूल्यन जैसी गंभीर चुनौतियाँ भी उत्पन्न हुई हैं। आधुनिक वैश्वीकरण की मुख्य प्रवृत्ति आर्थिक दक्षता और बाज़ार-केन्द्रित विकास पर आधारित है, जबकि मानव जीवन के नैतिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पक्ष अपेक्षाकृत उपेक्षित रह गए हैं।

इसी संदर्भ में भारतीय दार्शनिक परंपरा का **सांस्कृतिक राष्ट्रवाद** राष्ट्र की आत्मा को उसकी संस्कृति, सभ्यता और जीवन-मूल्यों में स्थापित करता है। यह राष्ट्र को केवल राजनीतिक संस्था नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक चेतना के रूप में देखता है। दूसरी ओर, पंडित दीनदयाल उपाध्याय का **एकात्म मानववाद** मनुष्य को शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा का समन्वित स्वरूप मानते हुए विकास को समग्र मानव-कल्याण से जोड़ता है।

यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि पूरक दार्शनिक अवधारणाएँ हैं। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद भारतीय सभ्यता की सांस्कृतिक चेतना को

अभिव्यक्त करता है, जबकि एकात्म मानववाद उसी चेतना को व्यक्ति, समाज, राष्ट्र तथा विश्व के समग्र विकास से जोड़ता है।

5.2 शोध के प्रमुख निष्कर्ष (Major Findings)

इस शोध से निम्नलिखित प्रमुख निष्कर्ष प्राप्त हुए—

1. वैश्वीकरण एक बहुआयामी प्रक्रिया है; इसे केवल आर्थिक घटना के रूप में नहीं समझा जा सकता।
2. आधुनिक वैश्वीकरण सांस्कृतिक पहचान एवं स्थानीय परम्पराओं के समक्ष नई चुनौतियाँ उत्पन्न करता है।
3. भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद सांस्कृतिक आत्मविश्वास एवं सभ्यतागत निरन्तरता का दार्शनिक आधार प्रदान करता है।
4. एकात्म मानववाद आधुनिक विकास मॉडल का मानवीय एवं नैतिक विकल्प प्रस्तुत करता है।
5. अन्त्योदय, समरसता, स्वदेशी एवं पर्यावरणीय संतुलन जैसे सिद्धान्त सतत विकास (Sustainable Development) से सामंजस्य रखते हैं।
6. वैश्वीकरण का भारतीय विकल्प अलगाव नहीं, बल्कि सांस्कृतिक आत्मविश्वास के साथ वैश्विक सहभागिता है।
7. भारतीय दर्शन वैश्विक नैतिकता (Global Ethics) के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने की क्षमता रखता है।

5.3 शोध का मौलिक योगदान (Original Contribution to Knowledge)

इस शोध का प्रमुख मौलिक योगदान यह है कि इसमें सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद को केवल राजनीतिक विचारधाराओं के रूप में नहीं, बल्कि **समकालीन वैश्वीकरण की दार्शनिक समीक्षा के वैकल्पिक प्रतिमान** के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

शोध यह प्रतिपादित करता है कि—

- वैश्वीकरण का संकट मूलतः सांस्कृतिक एवं नैतिक संकट है।
- आर्थिक विकास तभी सार्थक है जब वह मानव गरिमा, सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय संतुलन के साथ जुड़ा हो।
- भारतीय दर्शन के सिद्धान्त वैश्विक सार्वजनिक नीति (Global Public Policy) के लिए वैकल्पिक वैचारिक आधार प्रदान कर सकते हैं।
- "मानव-केंद्रित वैश्वीकरण" (Human-Centric Globalization) की अवधारणा एकात्म मानववाद के माध्यम से विकसित की जा सकती है।

यह प्रतिपादन शोध की मौलिक दार्शनिक उपलब्धि है।

5.4 शोध की सीमाएँ (Limitations)

यद्यपि यह अध्ययन व्यापक दार्शनिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है, तथापि इसकी कुछ सीमाएँ हैं—

- अध्ययन मुख्यतः दार्शनिक एवं सैद्धान्तिक स्रोतों पर आधारित है।
- अनुभवजन्य (Empirical) आँकड़ों का सीमित उपयोग किया गया है।
- अध्ययन भारतीय संदर्भ पर केन्द्रित है; अन्य सभ्यताओं के तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता शेष है।
- वैश्वीकरण के सभी आर्थिक आयामों का विस्तृत सांख्यिकीय विश्लेषण इस शोध का उद्देश्य नहीं था।

5.5 भविष्य के शोध की संभावनाएँ

इस विषय पर भविष्य में निम्न क्षेत्रों में अनुसंधान किया जा सकता है—

- एकात्म मानववाद एवं सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) का तुलनात्मक अध्ययन।
- कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI Ethics) और एकात्म मानववाद।
- सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एवं संवैधानिक लोकतंत्र का तुलनात्मक दार्शनिक अध्ययन।
- भारतीय ज्ञान-परम्परा एवं वैश्विक शासन (Global Governance)।
- जलवायु परिवर्तन और भारतीय पर्यावरणीय दर्शन।
- वैश्विक दक्षिण (Global South) के विकास मॉडल और एकात्म मानववाद।

5.6 समापन

अन्ततः यह कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण को न तो पूर्णतः स्वीकार किया जा सकता है और न पूर्णतः अस्वीकार। आवश्यकता इस बात की है कि वैश्वीकरण को मानवीय, नैतिक तथा सांस्कृतिक आधार प्रदान किया जाए।

भारतीय दर्शन का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद राष्ट्रीय आत्म-चेतना को सुदृढ़ करता है, जबकि एकात्म मानववाद मानव, समाज, प्रकृति और राष्ट्र के मध्य संतुलन स्थापित करने वाला समग्र जीवन-दर्शन प्रस्तुत करता है। यदि इन दोनों अवधारणाओं की पुनर्व्याख्या लोकतांत्रिक बहुलता, संवैधानिक मूल्यों तथा वैश्विक नैतिकता के साथ की जाए, तो वे इक्कीसवीं शताब्दी के लिए एक सशक्त वैकल्पिक विकास-दर्शन सिद्ध हो सकती हैं।

संदर्भ सूची

प्राथमिक स्रोत

- Upadhyaya, D. (1965). *Integral Humanism*. Suruchi Prakashan.

- Gandhi, M. K. (1909/2009). *Hind Swaraj*. Navajivan Publishing House.
- Vivekananda, S. (1999). *The Complete Works of Swami Vivekananda*. Advaita Ashrama.
- Aurobindo. (1918). *The Ideal of Human Unity*. Sri Aurobindo Ashram.
- Radhakrishnan, S. (1923). *Indian Philosophy* (Vols. I–II). Oxford University Press.

वैश्वीकरण

- Beck, U. (2000). *What Is Globalization?* Polity Press.
- Bhagwati, J. (2004). *In Defense of Globalization*. Oxford University Press.
- Giddens, A. (2002). *Runaway World*. Profile Books.
- Robertson, R. (1992). *Globalization*. Sage.
- Sen, A. (1999). *Development as Freedom*. Oxford University Press.
- Stiglitz, J. (2002). *Globalization and Its Discontents*. W. W. Norton.

भारतीय दर्शन

- Hiriyanna, M. (1993). *Outlines of Indian Philosophy*. Motilal Banarsidass.
- Dasgupta, S. (1922–1955). *A History of Indian Philosophy* (Vols. I–V). Cambridge University Press.
- Raju, P. T. (1985). *The Philosophical Traditions of India*. Motilal Banarsidass.

शोध-पत्र

- Bhargava, R. (2010). Political philosophy and Indian traditions. *Indian Philosophical Quarterly*.
- Chaturvedi, B. (2018). Integral Humanism and contemporary development. *Journal of Indian Council of Philosophical Research*.
- Singh, A. (2021). Cultural Nationalism in Contemporary India. *Indian Journal of Political Science*.
- Sharma, R. (2020). Integral Humanism and Sustainable Development. *JICPR*.

भारतीय ग्रंथ

- Rigveda.
- Yajurveda.
- Maha Upanishad.

- Bhagavad Gita.
- Manusmriti.
- Arthashastra.
- Mahabharata.
- Ramayana.

शोध-पत्र का समग्र निष्कर्ष

यह शोध यह प्रतिपादित करता है कि वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में **सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकात्म मानववाद** न केवल भारतीय बौद्धिक परंपरा की महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं, बल्कि वे मानव गरिमा, सांस्कृतिक विविधता, सामाजिक न्याय और सतत विकास पर आधारित **मानव-केंद्रित वैश्विक व्यवस्था** के निर्माण हेतु दार्शनिक आधार भी प्रदान करती हैं। यही इस शोध की केंद्रीय स्थापना एवं मौलिक अकादमिक उपलब्धि है।